

संस्कृत-पाठशाला में प्रसाद श्रीलाल शुक्ल

पंडितपुर की संस्कृत-पाठशाला का प्रसंग है। पंडित प्रेमनाथ शास्त्री भाषा और संस्कृत के विद्वान हैं। वे दकियानूस नहीं हैं। इसलिए भारवि और माघ के साथ-ही-साथ कभी-कभी प्रसाद और निराला का भी नाम ले लेते हैं। उन्हें सब छायावादी कवियों के नाम याद हैं। वे यह भी जानते हैं कि महादेवीजी संस्कृत की एम.ए. हैं, निराला ने बचपन में श्लोक लिखे थे और प्रसाद ने संस्कृत का अध्ययन घर पर किया था। पंत के बारे में उनकी राय अच्छी नहीं है क्योंकि पंत ने प्रभात का प्रयोग स्त्रीलिंग में किया है और 'दृग सुमन फाड़' में समास का विग्रह पैदा कर दिया है।

प्रभात बेला है। छायाएँ लंबी हो कर फैली हैं। अतः वातावरण छायावादी है। संस्कृत-पाठशाला का चबूतरा टूट कर धरती के उर पर चिंता-भार-सा टिका है। उस पर पड़ा हुआ छप्पर देख कर लगता है कि यहाँ प्रलय की लहरें आ चुकी हैं और उस पर पालना बन कर निकल चुकी हैं। उस छप्पर में बर के छत्ते शीतल ज्वाला-सी जला रहे हैं। यत्र-तत्र फैली मक्खियों का समुदाय हृदय में बसी हुई सुधियों की बस्ती-सा जान पड़ता है। पाठशाला के सामने जामुन का पेड़ टपक रहा है जिससे कण-कण में स्पंदन है। वहीं घने प्रेमतरु-तले एक सरोवर है जहाँ 'ले चल मुझे भुलावा दे कर' वाला हाल-चाल दिखाई देता है। जामुन टपकते हैं, विद्यार्थी खाकर गला खराब करते हैं और वायु मर्मर-स्वर में तरु-पल्लवों द्वारा कहती है, 'अब भी चेत ले तू नीच'; मेंढक बोलते हैं, 'करु. का. ब.,' 'करु. का. ब.,' जैसे इशारा कर रहे हों, 'करुणा कादंबिनी बरसे!'

इसलिए इसमें आश्चर्य ही क्या कि पंडित प्रेमनाथ शास्त्री बालकों को प्रसाद का काव्य पढ़ाने लगे! प्रसंग 'गायंति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे' ने खोला। वे बोले :

'अहा! धन्य हैं भारत-भूमि-भाग के रहनेवाले! देवता तक यह गीत गाते हैं...'

शास्त्रीजी का शीश छायावादी काव्य के अर्थ-सा जटिल है। मस्तक पर रक्तचंदन की बिंदी-ही-बिंदी दिखाई देती है, मानो कवि के मन में किसी अपरिचित प्रीतिमयी नायिका की स्मृति हो। छायावादी शब्दावली-सी कोमल और मधुर मुख-मुद्रा है। हृत्तंत्री-जैसा टूटा हुआ चश्मे का फ्रेम है। उसे स्नेह की डोर के समान धागे से जोड़ कर कान तक पहुँचाया गया है। वाणी में ऐसी विवशता है मानो बिदाई में वेदना मिली है। वे अब कह रहे हैं :

'बालको, यहीं प्रसाद जी ने भारत-वंदना में जो गीत लिखा है उसे भी सुन-समझ लो।'

'कवि कहता है :

अरुण यह मधुमय देश हमारा।

जहाँ पहुँच 'सुनसान' क्षितिज को

मिलता एक सहारा।

[पंडित जी ने 'अनजान' का पाठांतर 'सुनसान' बना कर कहा :]

'इसका गौण अर्थ यह है कि हमारा देश लाल-लाल है। यहाँ पहुँच कर सुनसान क्षितिज को एक सहारा मिल जाता है।'

अब इसका विशेष अर्थ देखो।

'अरुण का अर्थ है लाल। कवि-समय के अनुसार जैसे मलिनता आकाश और पाप का लक्षण है, धवलता यश, हास और कीर्ति का, वैसे ही लाल रंग क्रोध और अनुराग का लक्षण है।

"मालिन्यं व्योम्नि पापे यशसि धवलता वर्ण्यते हासकीर्त्यौ रक्तं च क्रोधरागौ....।" इससे यह सिद्ध हुआ कि अपने देश में क्रोध और राग की प्रधानता है। अर्थात् क्रमशः रौद्र और शृंगार रस का यहाँ प्राचुर्य है। अब 'मधु' का अर्थ लो। मधु माने मीठा। मधु का अर्थ मदिरा भी होता है। साथ ही उपनिषद् वाक्य है, "चरन् वै मधु विंदति।" यहाँ मधु का अर्थ अमृतत्व है। यदि मधु का अर्थ मधुर लें तो प्रमाणित होगा कि अपने देश में मिष्ठान्न का आधिक्य है। मिष्ठान्न का आधिक्य होने का ही परिणाम यह हुआ कि इस देश में ब्राह्मण-संस्कृति बहुत काल तक उन्नत स्थिति में रही। अथवा, मधु माने शहद; सो शहद सात्विक वृत्ति का द्योतक है, अर्थात् यह देश सात्विक गुणप्रधान है। मदिरा का अर्थ लिया जाय तो मदिरा यक्षों का पेय है। कालिदास ने "यस्यां यक्षाः सितमणिमयान्येत्य हर्म्यस्थलानि" वाले प्रकरण में कहा है कि यक्ष मधुसेवन करते हैं। अमरकोष में कहा है :

विद्याधराप्सरसो यक्षः ...

भूतोऽमि देवयोनयः।

'अतः मधुलाभार्थ इस देश में यक्षादि देवयोनियाँ आ कर बसीं। मधुमय बता कर कवि यह कहना चाहता है कि यह देश देवयोनियों का प्रिय है। पुनः देखो, मधु अर्थात् अमृतत्व। कहा जा सकता है कि अपने देश में अमृतत्व भरा है। अर्थात्, यहाँ मनुष्य अमर है। या यूँ कहिए कि यहाँ अमर अर्थात् देवगण मनुष्य हो कर आते हैं। "अमरा निर्जरा देवाः इत्यमरः" - इसे "गायन्ति देवाः" के "भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरुवात्" से सिद्ध किया जाय तो संगति बैठेगी। कुल मिला कर अर्थ यह हुआ कि इस देश में सात्विक पुरुष रहते हैं, यक्ष रहते हैं तथा देवता वास करते हैं। कुछ विद्वानों का अर्थ के विषय में यह मत है कि अरुण अर्थात् सूर्य मधु-भरा अर्थात् अमृतपूर्ण है और वही हमारा देश है, ऐसा गीत का अर्थ है। इससे यही प्रमाणित होता है कि इस देश में सभी सूर्यवंशी हैं और चंद्रवंशी किसी दूसरे देश से आए थे। सुकवि प्रसाद जी इतिहास के प्रकांड पंडित थे। इस पंक्ति में उन्होंने भारतीयों के सूर्यवंशी होने का सिद्धांत प्रतिपादित किया है।

'अब दूसरी पंक्ति कि व्याख्या करते हैं :

'जहाँ पहुँच सुनसान क्षितिज को मिलता एक सहारा।'

क्षितिज में ही छायावाद है। क्षितिज का प्रथम अर्थ तो यह है कि जो क्षिति अर्थात् पृथ्वी से उत्पन्न हुआ हो। पृथ्वी से उत्पन्न हुआ हो खनिज तत्व, लोहा, कोयला, मिट्टी का तेल। यह पदार्थ अन्य देशों में सुनसान पड़े रहते हैं किंतु भारत देश में आ कर इन्हें सहारा मिलता है। अतः जिस प्रकार कवि ने प्रथम पंक्ति में इस देश का इतिहास वर्णित किया है वैसे ही इस दूसरी पंक्ति में भूगोल का वृत्तांत सुनाया है। साथ ही, क्षितिज अर्थात् पृथ्वी और आकाश के मिलने का जहाँ भ्रम हो वह रोदसी-वृत्त। तुम जब ध्यान से देखोगे तो जानोगे कि सुनसान क्षितिज को इसी देश में सहारा मिला है क्योंकि जिधर देखो उधर क्षितिज-ही-क्षितिज है। यह हमारे देश की एक भारी भौगोलिक विशेषता है। ऐसी विशेषता इतर देशों में नहीं है।'

'अब आगे के चरण में अद्भुत रस का वर्णन है :

'सरस तामरस गर्भ-विभा पर

नाच रही तरु-शिखा मनोहर

छिटका जीवन हरियाली पर

मंगल कुंकुम तारा।'

'बालको! इस चरण का अवलोकन करो जिसका अर्थ साधना उतना ही कठिन है जितना 'माघ' के एकाक्षरी श्लोकों का। कहते हैं कि सरस अर्थात् रसपूर्ण तामरस अर्थात् कमल के गर्भ की जो विभा है उस पर मन हरने वाली तरुशिखा अब नाच रही है। हरियाली पर जीवन अर्थात् जल फैला है और उसमें कुंकुमवर्ण मंगलतारा शोभायमान है।

'इन पंक्तियों का अर्थ समझने हेतु भाषा का साहित्य समझना चाहिए। ये पंक्तियाँ छायावाद की हैं। वाद अर्थात् सिद्धांत। अर्थात् इन पंक्तियों के अंतर्गत प्रतिकृति का सिद्धांत निहित है। पहले हरिऔध जी ने 'प्रियप्रवास' में लिखा था :

'तरु-शिखा पर थी अब राजती

कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा।'

'अब छाया का सिद्धांत लगा कर प्रसाद जी ने इस भाव को उलट दिया है। अतः पहले यदि कमलिनी-कुल के वल्लभ की प्रभा तरु-शिखा पर विराजती थी तो छाया-रूप में कमल-कुल की प्रभा अब तरु-शिखा पर विराजती है और छाया का प्रयोग होने के कारण तथा जलमयी हरियाली के संपर्क से वह नाचती-सी दीख पड़ती है। और उसकी रक्ताभा मंगल-तारा-सी जान पड़ती है। इन पंक्तियों में पुरातन साहित्य को उलट कर जल में छायावत् करके दिखाया गया है। साथ-ही-साथ अद्भुतरस का भी समावेश किया गया है। आगे कहते हैं :

'लघु सुरधनु-से पंख पसारे

शीतल मलय समीर सहारे

उड़ते खग जिस ओर क्षितिज को

समझ नीड़ निज प्यारा।'

'अपने देश की वंदना का मुख्य भाग इन्हीं पंक्तियों में है। कवि कहता है कि इस देश में ऐसे भी पक्षी हैं जो कि उड़ते हैं। जब वे उड़ते हैं तो उनके पंख इंद्र-धनुष-सा बनाते हुए फैलते हैं। इस देश के पक्षी पंखों से नहीं उड़ते। पंख तो केवल पसारते-भर हैं। उड़ते वे मलय-समीर के सहारे हैं। अब यह शंका उठती है कि जब मलय-समीर नहीं होता तब वे किसके सहारे उड़ते हैं? इसका समाधान प्रथम तो यही है कि जो मलय-समीर न होने पर भी उड़ते हैं वे इस देश के पक्षी न होंगे। अथवा द्वितीय समाधान यह है कि मलय-समीर न होने पर जब वे उड़ते हैं तब पंख केवल पसारते नहीं उनका सहारा भी लेते हैं। प्रसाद जी को पक्षियों का और विशेष कर इसी देश के पक्षियों का विशद ज्ञान था। अतः तुम देखो कि कहते हैं कि इस देश के पक्षी क्षितिज को ही अपना नीड़ अर्थात् घोंसला समझ कर उड़ते हैं। इस प्रसंग में मृग-तृष्णा की छाया आ गई है। जैसे पृथ्वी पर हिरन मरुभूमि में बालू को देख उसे सरिता का जल मान उसी दिशा में धावता है वैसे ही आकाश में पक्षी क्षितिज को अपना नीड़ जान उड़ते हैं और अंत में शोक को प्राप्त होते हैं।

'इस प्रकार अब तक इस गीत में तुम्हें इस देश के इतिहास, भूगोल, जड़, चेतन सबकी दशा का ज्ञान कराया गया। जैसे वे सब यहाँ हैं, वैसे कहीं नहीं हैं। यही भारत-महिमा है। इसी से भारत लोकवंद्य है। इसी से देवता यहाँ अवतार लेते हैं। अब आगे कहते हैं :

'हेम कुंभ, ले उषा सबेरे...।'

पंडितजी ने न केवल मूल के अर्थ को, बल्कि मूल पाठ को भी अपने ढंग से तोड़-मरोड़ कर प्रसाद की इतना बखान किया था। संस्कृतज्ञ होने के नाते अशुद्ध अर्थ को 'विकल्प' बताना और अशुद्ध पाठ को 'पाठांतर' कहना उनका अपना अधिकार है। अतः उस अधिकार का पूर्ण प्रयोग करके वे प्रसाद के साहित्य की गरिमा और इस देश की महिमा 'गायंति देवाः' की भूमिका में समझाते रहे। पर प्रसाद की काव्यात्मा वहाँ अधिक न ठहरी। वह पंडितजी द्वारा की गई काव्य-मीमांसा का रस ले कर पछताती हुई यह कह कर अंतर्हित हो गई :

मैंने भ्रमवश जीवनसंचित

मधुकारियों की भीख लुटाई।



[शीर्ष पर जाएँ](#)